महावाक्यार्थ निर्धारण के लक्षणाा की उपयुक्तता

ममता स्नेही

कूटशब्द *अद्वैत, मुख्यवृति, गुणवृत्ति, लक्षणा, जहल्लक्षणा, अजहल्लक्षणा, जहदजहल्लक्षणा, प्रत्यगात्मा।*

शाङ्करवेदान्त का परमप्रयोजना ब्रह्मात्मैक्य अर्थात् अद्वैत की स्थापना करना है तथा इसमें शब्दप्रमाण के अतिरिक्त अन्य किसी भी प्रमाण की गति नही है क्योकिं ब्रह्मा को अवाङ्मनसगोचर कहा गया है। ब्रह्मात्मैक्य की प्राप्ति हेतु औपनिषदिक महावाक्यों का अर्थनिर्धारण किया जाता है जो कि जीव-ब्रह्मा ऐक्य प्रतिपादक कहे गए है। इस ऐक्य को बतलाने में शब्द की अभिधावृति (मुख्यवृति) असमर्थ कही गई है तथा लक्षणा ही इस ऐक्य को प्रस्तुत करने में समर्थ बतलाई गई है। अतः महावाक्यार्थ निर्धारण में लक्षणा की उपयुक्तता ही अद्वैताचार्यो को स्वीकृत है।

अद्वैतवाद भारतीय दर्शन का वह सिद्धान्त है जिसके अनुसार परम सज्ञाएं दो नहीं, अद्वैत है। यहां यह जिज्ञासा हो सकती है कि अद्वैत वेदान्त जब अन्तिम सत्ता को दो या दो से अधिक नहीं मानता तो उसे एक ही क्यों नही कहा गया। इसे एक नकारात्मक पद से ''अद्वैत'' क्यों कहा गया है ? इसका कदाचित् सबसे बड़ा कारण यह है कि शब्द ''एक'' या यों कहें, संख्या ''एक'' ''दो'' से सोपक्षित होती। बिना दो के एक की कल्पना नहीं की जा सकती। यदि एक है तो दो भी होगा और अन्य संख्याएँ भी होगी। किन्तु अद्वैत दर्शन में जिस परम सत्ता की चर्चा की गई है वह ''निरपेक्ष'' है, वह किसी भी अन्य संख्या से सापेक्षित नही है। इसलिए इसे एक न कहकर अद्वैत कहा गया है। संक्षेप में, अद्वैतवाद सत् की संरचना में संख्या के प्रवेश को अस्वीकार करता है। एकत्ववाद को अद्वैतवाद तभी कहा जा सकता है यदि एक से हमारा तात्पर्य निरपेक्ष एक से हो न कि संख्यागत एक से।

अद्वैत वैदान्त के अनुसार जब ब्रह्म की उपलब्धि (अनुभव) हो जाती है तो अनेकत्व स्वत: समाप्त हो जाता है।[1] अर्थात् जगत् की अनेकता वस्तुत: यथार्थ नही है क्योकि जब मनुष्य ब्रह्म को ब्रह्मनुभव हो जाता है तो उसके लिए विश्व की वस्तुएँ व्याकरण शास्त्र की ख्याति है। शाङ्करवेदान्तियों

ने भी अर्थनिर्धारण सिद्धान्त के क्षेत्र में कतिपय नवीन विषयों को समाहित किया है, जो इस सम्प्रदाय का मौलिक योगदान है। जैसे–लक्षणा के क्षेत्र में भागत्यागलक्षणा को महावाम्यार्थ निर्धारण में उपयुक्त माना है।[5] शब्दप्रमाण के सन्दर्भ में यह ज्ञातव्य है कि वेदान्त दर्शन महाकाव्य व अवान्तर वाक्यों के द्वारा ब्रह्मज्ञान को स्वीकार करता है।[6] अवान्तर शब्द का अर्थ मध्य होता है अर्थात् अवान्तर वाक्य मध्यवर्ती होकर महावाक्य के विश्लेषण में सहायक होते है। शांकखेदान्त में प्रधान महावाक्य चार हैं। इन्हें महावाक्य इसलिए कहा जाता है, क्योकि इनमें वेदान्त का सर्वोच्च व सम्पूर्ण ज्ञान निहित है। ये अत्यन्त लघुकाय होते है परन्तु परमसत्ता का सम्पूर्ण ज्ञान इनमें निहित होता है। ये चार महावाक्य–प्रज्ञानं ब्रह्म, तत्त्वमसि, अहं ब्रह्मास्ति तथा अयर्मात्मा (आत्मा) ब्रह्म हैं। इन महावाक्यों का अर्थ ज्ञान होने पर ही इनकी सार्थकता है। महावाक्यों के अर्थनिर्धारण में अभिधा शब्दशक्ति समर्थ नही है, अत: अनुपयुक्त कही गई है जबकि लक्षण द्वारा ही महावाक्यों का अर्थनिर्धारण करना सम्भव हो पाता है अर्थात् लक्षणा में ही वह सामर्थ्य है जो महावाक्यों का अर्थज्ञान करवा सकती है। अत: महावाक्यार्थ निर्धारण में लक्षण की ही उपयुक्तता स्वीकार की जाती है।

पञ्चप्रक्रिया के अनुसार मुख्यावृति, गुणवृत्ति और लक्षणावृत्ति इन तीनों वृत्तियों में से गुणवृत्ति और लक्षणावृत्ति प्रत्यागात्मा अर्थ को प्रस्तुत करती है।[7] उसके विषय में कहते हैं कि मुख्यावृत्ति को छोड़कर गुणवृत्ति और लक्षणावृत्ति इन दोनों का प्रत्यगात्मा में अप्रतिषेध है।[8] प्रत्यगात्मा में षष्ठी अर्थात् सम्बन्ध नहीं हो सकता क्योकि प्रत्यगात्मा असङ्ग होने से उसका विषय नही हो सकता है। गुण भी नहीं हो सकता क्योकि वह निर्गुण है क्रिया भी नहीं हो सकता क्योकि वह निष्क्रिय है। जाति भी नहीं हो सकती क्योकि सदृश व्यक्ति में ही जाति की परिकल्पना होती है, वह अद्वितीय है। रूढ़ि विषय में होती है, अविषय है, रूढ़ि विषय में होती हैं अविषय में नहीं। अतएव प्रत्यगात्मा में मुख्यावृत्ति असम्भव होने से प्रतिषेध किया गया है।[9] इसी बात को संक्षेप शारीरक में भी कहा गया।[10] लोक में प्रसिद्ध जितने भी विशेषण है उस से वह परे है एवं वाणी एवं मन से भी परे है।[11] अतएवं प्रत्यगात्मा में सम्बन्धादि असम्भव होने से मुख्यवृत्ति (अभिधा) प्रत्यगात्म अर्थ को प्रस्फुरित नहीं कर सकती।[12] मुख्यावृत्ति प्रत्यगत्मा में सम्भव नहीं। अतएव गौणी एवं लक्षणावृत्ति प्रत्यगात्म अर्थ को उपस्थापित करने में समर्थ है।[13] सर्वज्ञात्ममुनि के अनुसार गुणयोग के आधार पर गौणीवृत्ति से अहम् शब्द की प्रत्यगात्मा में वृति स्वीकार की गई है।[14] संक्षेपशारीरक में भी कहा गया है कि निर्गुण ब्रह्म में किसी गुण का होना सम्भव नहीं है। फिर गया भी प्रौग्विाद

के आधार पर गौणीवृति का समर्थन किया गया है। जैसे लोक में 'अगिनर्माणवकः' 'सिंह पुमान्' इन उदाहरणों में बालक में दाहरत्व न होने पर भी तेजस्विता गुण को देखकर उसे 'अगिनर्माणवक' कहा गया। इन प्रयोगों में भी मुख्यार्थ की अनुपपत्ति के कारण ही गौणीवृत्ति स्वीकार्य है। उसी प्रकार 'अहं ब्रह्मस्मि' आदि प्रयोगों में भी 'अहम्' तथा 'ब्रह्म' पद शम्यार्थ में रहने वाले चेतन आदि गुणों के कारण शुद्ध चैतन्य अर्थ का बोधक है।

अद्वैत वेदान्त में लक्षणा[15] तीन प्रकार की मानी गई है–जहल्लक्षणा, अजल्लक्षणा तथा जहदजहल्लक्षणा। प्रत्यगात्मा में जहल्लक्षणा और अजहल्लक्षणा ये दोनों सम्भव है।[16] 'तत् ' पद एवं 'त्वम्' पद सद्वितीयशबल में अर्थात् प्रत्यक्चैतन्य अर्थ में प्रयुक्त है एवं परोक्ष्यबल और प्रत्यम्चैतन्य में से एक अंश का परित्याग करके परिपूर्ण प्रत्यम्चैतन्य सत् एकरूप अर्थ में इन दोनो पदों की वृन्ति सम्भव है जैसे–'सोऽयम्' आदि वाम्यस्थ पदों की वृत्ति सम्भव है जौसे–'सोऽयम्' आदि वाम्यस्थ पदों की वृत्ति एक पिण्ड में होती है।[17] जैसे 'सोऽयं देवदत्तः' में भूतकाल विशिष्ट देवदत्त ही वर्तमान काल विशिष्ट देवदत्त है। यहाँ भूतकाल और वर्तमानकाल के वैशिष्टयरूप एक अंश में विरोध होने के कारण भूतकालिक विरूद्ध अंश को छोड़कर अविरूद्धांश देवदत्त मात्र को जहदजहल्लक्षणा द्वारा प्रस्तुत करता है, उसी प्रकार 'तत्वमसि' महावाक्य में परोक्षत्वादि विशिष्ट चैतन्य और अपरोक्षत्वादि विशिष्ट चैतन्य कें एकत्वरूप वाक्य के अर्थ का परोक्षत्वापरोक्षत्वादि एक अंश में विरोध होने पर परोक्षत्व व अपरोक्षत्व आदि वैशिष्ट्यरूप विरूद्ध अंश का परित्याग कर अविरूद्ध अंश अखण्ड चैतन्य को जहदजहल्लक्षणा द्वारा प्रस्तुत करता है । इस प्रकार तत् (ब्रह्म) तथा त्वम् (जीव) रूप एकत्व अर्थ की प्राप्ति से अद्वैतवेदान्त के परम प्रयोजन ब्रह्मत्मैम्य की प्राप्ति हो पाती है । यह अभीष्ट अर्थ लक्षणा द्वारा ही प्राप्य कहा गया है।

अन्तटिप्पणी

1. यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
   तत्र को मोह : कः शोक एकत्वमनुपश्यतः।। 7 ।। ईशावास्योपनिषद, पृ. 16
2. देहात्मप्रत्ययो यद्वत्प्रमाणत्वेन कलिपतः।
   लौकिकं तद्वदेवेदं प्रमाण त्वाऽऽत्मनिश्चयात्।। ब्र. खू. शा. भा. 1.1.4
3. परमार्थावस्थायां सर्वव्यवहाराभावं वदन्ति वेदान्ताः सर्वे। वही, 2.1.14

4. शब्दमूलं च ब्रह्मशब्दप्रमाणकं नेन्द्रियादिप्रमाणकं तद्यथा शब्दमभ्युप-गन्तव्यम्। वही-2.1.27
5. तत्वमस्यादिवाम्येषु लक्षणा भागलक्षणा।

   सोऽयमित्यादिवाक्यस्थपयोरिव नाऽपरा।। वाम्यवृत्ति-48, पृ.-125
6. 'अहं ब्रह्मास्मि' इति महावाम्यार्थज्ञानादेव मुमुक्षूणां मोक्षो भवति। पञ्च-प्रक्रिया-2,
7. ननु मुख्यगुणलक्षणावृतीनां मध्ये कतमा प्रत्यगात्मनि शब्दस्य वृत्तिरिति। पञ्चप्रक्रिया-1
8. तत्र ब्रूमः मुख्यां वृतिं वर्जयित्वा गुणलक्षणावृत्योः प्रत्यगात्मन्यप्रतिषेधः। बही-1
9. षष्ठी गुणक्रिया जातिरूढीनां लौकिकानाम् अभावात् प्रत्यगात्मनि मुख्या वृत्तिः प्रतिषिध्यत एव। वही-1
10. ''षष्ठीजातिगुणक्रियादिरहिते सर्वस्य विज्ञातरि,

    प्रत्यक्षे परिवर्जिताखिलजगद्द्वैतप्रपञ्चे दृशौ।

    सन्तयक्तव्यवधानके परमेक विष्णोः पदे शाश्वते,

    त्वय्यज्ञानविजृम्भिता न हि गिरो मुख्यप्रवृतिक्षमाः''। सक्षेपशारीरक -1.239
11. यतो वाचो निवर्तन्ते। अप्रप्य मनसा सह। तैतिरोयोपनिषद् 2.4.1
12. न खलु 'नेति नेति' प्रतिषिद्धसमस्तविशेषेण प्रत्यगात्मनि वाङ्मनसगोचरातीते पषष्ठयदि असम्भवोऽस्ति, येन मुख्या वृत्तिर्घटेत्। पञ्चप्रक्रिया-1
13. तस्माद् गौणी लक्षणा वा शब्दस्य प्रत्यगात्मनि वृत्तिः। वही,1
14. इति गुणयोगादहमादिशब्दस्य गौणी प्रत्यगात्मनि वृत्तिरङ्गीकृतैल। वही-1
15. मानान्तरविरोधे तु मुख्यार्थस्य परिग्रहे। मुख्यार्थेनाऽविनाभूते प्रतीतिर्लक्षणोच्यते 11 वाक्यवृत्ति-47, पृ. 121
16. लक्षणपि जहल्लक्षणा अजहल्लक्षणा च नेष्यते, जहदल्लक्षणा तवङ्गीक्रियते। पञ्चप्रक्रिया-1
17. परोक्ष्यसद्वितीयशबले व्युत्पन्नयोः तत्वम्पदयोः एकांशपरित्यागेनांशान्तरे वृन्तिसंभवात् 'सोऽयम्' इत्यादि वाक्यस्थ पदयोरिव। वही-1

सन्दर्भग्रन्थसूची

1. वाक्यवृन्ति, शंकराचार्य, श्री दक्षिणामूर्ति मठ, प्रकाशन, काशी, 2000।
2. ईशादि नौ अनिषद्, गीताप्रेस गोरिखपुर, 2009।
3. संक्षेपशारीरक, सर्वज्ञात्मन् रामतीर्थकृत अर्थप्रकाशिका सहित, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 1992।
4. पञ्चप्रक्रिया, सर्वज्ञात्मन्, इवानकोमरेककृत (Language and Release) आङ्गलानुवादसहित, दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास, 1985।
5. ब्रह्मसूत्रशांकरभाष्यम्, सत्यानन्दी व्याख्या सहित, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, 2007।

ममता स्नेही

शोधच्छात्रा, एम. फिल.

जे. एन . यू., नई- दिल्ली